वर्ष -14 जुलाई, 2018 अंक-147

Regd. Postal No. Dehradun-328/2016-18
Registered News Paper RNI No. UTTBIL/2006/19407

सहायकारी शक्तियों के सूक्ष्म संरक्षण में

सत्य देव संवाद

इस अंक में

क्रोध	02
देववाणी	03
सम्पादकीय	04
कैसे हो धन के मोह से उद्धार?	05
कैसी होती है धन के गुलाम की...	06
धन के मालिक बनें या ग़ुलाम	08
कैसी होती है धन के दास की.....	10
क्या है देवात्मा का मार्गदर्शन?	12
कैसी होनी चाहिये कामना?	13
THE LEAVES	14
आपने कहा था	16
देव जीवन की झलक	18
आपकी सेहत बस सात क़दम	20
सफलता के प्रकार	22
कृतज्ञता सुमन	24
कहाँ खो गई बच्चों सी निश्छल...	25
भोपाल केन्द्र समाचार	31
भावी शिविर	32

जीवन व्रत

'सत्य शिव सुन्दर ही मेरा परम लक्ष्य होवे,
जग के उपकार ही में जीवन यह जावे।'
- *देवात्मा*

सम्पादक
नवनीत अरोड़ा

सहसम्पादक मण्डल
अनिता, चन्द्र गुप्त, वीरेन्द्र अग्रवाल

(सभी पद अवैतनिक हैं।)

ग्राफ़िक डिज़ाईनर : प्रमोद कुमार कुलश्रेष्ठ

**For Motivational Talks/Lectures/Sabhas :
Visit our channel Shubhho Roorkee on
www.youTube.com**

लेखक के सभी विचारों से सम्पादक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

वार्षिक सदस्यता ` 100, सात वर्षीय ` 500, पन्द्रह वर्षीय ` 1000
मूल्य (प्रति अंक): ` 9

सम्पर्क सूत्र : पत्रिका सम्बन्धी किसी भी जानकारी हेतु
दूरभाष संख्या: 01332-272000, 94672-47438, 99271-46962 (संजय धीमान)
समय : प्रतिदिन सायं 5:00 से सायं 9:00 तक (रविवार को छोड़कर)
e-mail: Shubhho.rke@gmail.com or navneetroorkee@gmail.com

क्रोध

क्रोध इन्सान का सबसे बड़ा दुश्मन है। क्रोध एक बार दिमाग़ पर हावी हो गया, तो दीवाला निकालकर ही दम लेता है। क्रोध जहाँ है, वहाँ दीवाली कैसे? वहाँ तो दीवाला ही होगा। हर क्रोधी को एक दिन क्रोध का ख़ामियाज़ा उठाना पड़ता है। इसलिए क्रोध करे भी तो रोज़ नहीं, सप्ताह में एक दिन। कभी-कभी करोगे, तो सामने वाले पर उसका असर भी पड़ेगा। रोज़ दिन में दस बार क्रोध करोगे, तो सामने वाला कहेगा- इनकी तो चिल्लाने की आदत पड़ गई है। हाँ, हो सके तो कभी-कभी ख़ुद पर क्रोध और शत्रुओं पर क्षमा करें।

- मुनि तरुण सागर

LITTLE SECRETS OF SUCCESS

Difficulties make us stronger and lead us onto greater victories. Mountains aren't easy to climb, but the view from the top is usually the best.

- J. Donald Walters

दिल में घर

बहुत आसान है ज़मीन पे महल बनाना,
ज़िन्दगी गुज़र जाती है दिलों में घर बनाने के लिए।

हमारा सबसे बड़ा सौभाग्य तब आता है, जब गैर अपने हो जाते हैं।
सबसे बड़ा दुर्भाग्य तब होता है, जब अपने गैर हो जाते हैं।

परस्पर ईर्ष्या का परिणाम अच्छा नहीं होता। स्वयं यदि प्रतिष्ठा प्राप्त करनी हो तो अपने योग्य साथियों को भी प्रतिष्ठित करना होगा। ईर्ष्या से जहाँ मानसिक अशान्ति रहती है, वहाँ साथ ही अपमान भी होता है। ईर्ष्या एक शीतल आग है जो मनुष्य को धीरे-धीरे जला डालती है।

अति सुन्दरता के कारण सीता हरी गई, अति गर्व से रावण मारा गया।
अति को सब जगह छोड़ देना चाहिए।

देववाणी

जब तक नीच घृणा शक्ति नष्ट न हो, तब तक धर्मभावों की काश्त हो नहीं सकती। जैसे कोई बीज अच्छी ज़मीन में ही उग सकता है, यदि उसे आग की भट्टी में डाल दिया जाए तो वह जल जाएगा, इसी प्रकार से ही नीच घृणा की आग हृदय भूमि को जलाने का काम करती है। यदि यह आग न बुझ सके, तो फिर किसी आत्मा के भीतर जो धर्मभावों का मादा मौजूद होता है, वह धीरे-धीरे नष्ट हो जाता है।

– देवात्मा

रिश्ते

रिश्ते और पौधे दोनों एक जैसे होते है;
लगाकर भूल जाओ, तो दोनों ही सूख जाते हैं।

POETRY BITS

Happy the man, unhappy the alone,
He, who can call today his own,
He, who secures, within, can say:
"Tomorrow does the worst, for I have liv'd today."

- Horace

व्यक्ति के हाथ में कर्म के सिवा कुछ भी नहीं होता। यही उसके धर्म का प्रतिबिम्ब है। भाग्य भी कर्मों का ही परिणाम है।

☺☺☺☺☺☺ **xqnxqnh**

एक महिला अपने वकील से बोली, ''मैं इस कटी ऊंगली के लिए दस लाख रुपए का दावा करना चाहती हूँ।''

वकील, ''इस एक ऊंगली का इतना बड़ा दावा क्यों?''

महिला बोली, ''दरअसल इसी ऊंगली पर तो मैं अपने पति को नचाया करती थी।''

अधिक हर्ष और अधिक उन्नति के बाद ही अधिक दु:ख और पतन की बारी आती है।

सम्पादकीय

क्या धन जीवन की आवश्यकता है?

वर्तमान युग में धन जीवन की आवश्यकता है। प्रतिदिन जिस वस्तु की हम सबसे ज़्यादा चर्चा करते हैं, कामना करते हैं, उसे पाने हेतु जीवन का अधिकतम समय देते हैं तथा वह पग-पग हमारे उपयोग में आती है- वह वस्तु धन या पैसा ही तो है। इसे मिथ्या समझना या स्वप्न कहना, इसे कमाने, ख़र्च करने व अपने पास रखने को अधर्म समझना, जीवन में धन के महत्त्व की वास्तविकता से मुँह मोड़ना है। ऐसे जन स्वयं मिथ्या व स्वप्न में जी रहे हैं।

नि:सन्देह, आदि काल में धन या पैसे की आवश्यकता न थी, इन्सान की इच्छाएं व आवश्यकताएं भी अत्यन्त सीमित थीं। पेट भरने से आगे इन्सान सोचता भी न था, लेकिन तब वह पशु स्तर पर जीवन जीता था। विकासक्रम में धीरे-धीरे बुद्धि के विकास ने उसका ध्यान खेती की ओर फेरा, फिर पाषाण युग आया, धातुओं का युग आया, कलपुर्ज़ों तथा बिजली व कम्प्यूटर का युग आया। इस दौरान इन्सान ने रोटी, कपड़ा, मकान, शिक्षा, सुरक्षा, स्वास्थ्य तथा अन्य सुख सुविधाओं के क्षेत्र में जो-जो निरन्तर प्रगति की है व कर रहा है, उसमें धन व पैसे की भूमिका व महत्त्व से कैसे इन्कार किया जा सकता है। आज मानवता जिस गति से आगे बढ़ रही है, उसके साथ क़दम से क़दम मिलाकर चलने के लिए धन की आवश्यकता है।

जो धर्मगुरु व प्रचारक धन को माया, मिथ्या व त्याज्य कहते हैं, वो भी प्राय: इसी धन से प्राप्त सुख सुविधाओं यथा वाहन, कीमती मोबाइल, शानदार इमारतों, ए.सी. आदि का प्रयोग आमजन से कहीं ज़्यादा करते देखे जा सकते हैं। अब यह लोग खुद न कमाकर दूसरों के कमाए धन से सुख-सुविधाओं का भोग करते हैं। ये उपदेश में भले कुछ भी कहें, परन्तु वे अपने व्यावहारिक जीवन में धन की आवश्यकता को ही सिद्ध कर रहे हैं। एक धनवान व निर्धन के प्रति इनके व्यवहार में भी आपको स्पष्ट रूप से बहुत अन्तर दिखेगा।

सारांशत:, आज धन प्रत्येक के जीवन की मूलभूत आवश्यकता बन चुका है।

आत्म निरीक्षण ही जीवन की सफलता का मूल मन्त्र है।

परोपकार ही अमरत्व प्रदान करता है।

कैसे हो धन के मोह से उद्धार?

धन के मोह से होने वाले हानिकारक फलों से हमारा व हमारी सन्तान का उस समय तक उद्धार नहीं हो सकता, जब तक हमारे हृदय में धन के दास की कृपापात्र अवस्था को सम्मुख लाकर उसके भयानक फलों के देखने की आँख पैदा न हो और जब तक हम धन व अपनी सन्तान के मोह में फँसकर जिस दासत्व को प्राप्त हो रहे हैं, उसके विनाशकारी रूप को देखकर उससे उद्धार पाने की हमारे हृदय में आकांक्षा उत्पन्न न हो। क्या ऐसी आकांक्षा हममें पाई जाती है? क्या उसके विषय में हम कभी कोई चिन्ता या विचार करते हैं? यदि नहीं करते, तो प्रयत्न करके और इस पुस्तिका को बार-बार पढ़कर उस पर विचार करने का साधन करें और जो लोग परोपकार के कामों में अपने धन को बार-बार ख़र्च करते रहे हों या अब करते हों, उनके ऐसे दृष्टान्त को बार-बार सम्मुख लायें। यदि हमारे भीतर धन के विनाशकारी मोह से उद्धार पाने की कुछ इच्छा उत्पन्न हो चुकी हो, तो हम अपने कमाए या पाए हुए धन में से उचित रूप से दान करने का अभ्यास करें। अपनी विशेष-विशेष आवश्यकताओं और अपने बाद अपनी पत्नी या किसी सन्तान आदि के निमित्त हमें उचित रूप से जो कुछ छोड़ जाना आवश्यक हो, उसके भिन्न जो कुछ अधिक हो उसे शुभ कार्य के लिए और उसमें से सबसे बढ़कर सत्यधर्म के प्रचार विषयक महा हितकारी कामों के लिए शुद्ध भाव से दान करें। इसके भिन्न अपनी मासिक या वार्षिक आय में से अपने या अपने परिवार के पालन के निमित्त जितना व्यय या संचय करना हमारे लिए उचित व आवश्यक हो, उसके भिन्न जो कुछ बचा रहे, उस सबको भी दान करें।

फिर, यदि सम्भव हो, तो हम यह दान उन लोगों की न्याईं न करें, जो किसी नीच कामना की तृप्ति, यथा नाम यश, उपाधि या पद आदि की प्राप्ति के लिए करते हैं। किन्तु, केवल पर-हित के लिए विशुद्ध भाव से करें, जिससे एक ओर हम धन के मोह और उसके विनाशकारी फलों से रक्षा पा सकेंगे, वहाँ दूसरी ओर अपनी पत्नी व सन्तान आदि के लिए इस विषय में सद्दृष्टान्त दिखा सकेंगे। यदि हम ख़ुद किसी आत्मिक परिवर्तन या किसी अन्य परोपकार के लिए अपने आपको समर्पण करने के अयोग्य समझते हों, तो बेशक धन कमायें और ख़ूब कमायें, परन्तु मोह के वश होकर धनी बनने या अपने पीछे उसे पूर्णतः सन्तान के पास छोड़ जाने के लिए न कमायें। किन्तु, उपर्युक्त प्रकार से दान करने और उसके द्वारा अपना व औरों का कल्याण साधन करने के लिए कमायें।

बुरी संगत से एकाकीपन अच्छा है।

कैसी होती है धन के गुलाम की हालत?

धन का यह गुलाम, जिसका नाम धन दास कहना चाहिए, प्रतिदिन धन कमाने के लिए कितना कुछ कार्य और कितना कुछ परिश्रम करता है और कितना कुछ उसके लिए कष्ट उठाता है। परन्तु इस सबका फल! वही नीच वासना का दासत्व और मोह की उन्नति।

इस धन दास का शरीर कब तक साथ देगा? एक दिन अवश्य छूट जाएगा और फिर उसका यह धन कहाँ जाएगा? क्या उसी के साथ जाएगा? नहीं! वह उस नीच व्यसनी की कुछ परवाह न करेगा। जैसे कोई साँप किसी चूहे को पकड़कर और उसके लहू को चूसकर उसे वहीं छोड़ देता है, वैसे ही यह धन का विनाशकारी मोह न केवल अपने दास आत्मा को, किन्तु उसके शरीर का भी बहुत कुछ खून पीकर उसे यहीं छोड़ देता है। यदि उसकी मृत्यु पर उसके कुछ सम्बन्धी मोह के वश में होकर रोते हैं, तो उसी के कुछ सम्बन्धी यह देखकर कि उस अभागे के मरने से उसका सारा या बहुत धन उन्हें प्राप्त होगा, मन-मन में प्रसन्न भी होते हैं।

धन दास जैसे मोह में फँसकर धन का दास बन जाता है, वैसे ही इसी प्रकार के मोह में फँसकर वह अपनी पत्नी व अपनी सन्तान का भी दास बन जाता है। वह धन का अनुचित लालची बनकर जैसे उसे अधिक से अधिक अपने पास देखने का आकांक्षी रहा था, वैसे ही अपने इस धन को मृत्यु के अनन्तर अपनी उन सन्तान के पास ही छोड़ जाना चाहता है कि जिनके मोह में फँसकर वह उनका भी दास बन चुका है।

वह अनेक बार उस गधे की न्याईं होता है कि जो कुम्हार के सोटे के अधीन रहकर सारा दिन उसके लिए ईंटों व मिट्टी के बोरे ढोता रहता है और जिसकी मज़दूरी तो कुम्हार ले लेता है और वह कूड़ी पर चरकर अपना गुज़ारा करता है। गधा कुम्हार के डंडे से और वह मोह के डंडे से परिचालित होता है। मोहग्रस्त मनुष्य का यह कैसा बुरा दृश्य! मोहग्रस्त जन की यह कैसी शोचनीय व तरसनाक अवस्था!!

वस्तुतः धन का दास तो गधे से भी बढ़कर बुरा बन जाता है, क्योंकि गधा तो कुम्हार के पास काम के न रहने पर शान्तिपूर्वक खाली भी फिरता रहता है और अपनी सन्तान के सम्बन्ध में कोई नीच मोह नहीं रखता, परन्तु धन का दास जब तक जागता रहता है, तब तक अकसर उसी की चिन्ता और उसी की उधेड़-बुन में लगा रहता है और अपनी सन्तान के साथ उसी प्रकार के नीच मोह में बन्धकर सारी उम्र जो कुछ इकट्ठा करता है, उसे उन्हीं के पास छोड़ जाना चाहता है, कि जो या तो उसी के न्याईं उस धन के

ज़िन्दगी कभी आसान नहीं होती। इसे आसान बनाना पड़ता है,
कुछ नज़रअन्दाज़ करके कुछ बर्दाश्त करके।

ढेर के बढ़ाने में गधे की तरह काम करके अपने लिए विनाशकारी मोह को बढ़ाते रहते हैं या उससे भी बढ़कर नाना प्रकार के बुरे और पाप कर्मों में ख़र्च करके अपनी आत्मा के भिन्न अपने शरीर को भी कई प्रकार के रोगों से ग्रस्त और दु:खदाई बना लेते हैं। इस प्रकार दोनों ही इस धन रूपिणी मायाविनी के दास बनकर अपने-अपने सम्बन्धों को एक-दूसरे के लिए सब प्रकार से हानिकारक और दु:खदाई प्रमाणित करते हैं।

क्या धन कमाना ज़रूरी है ?

नि:सन्देह, प्रत्येक मनुष्य को अपने व अपने परिवार के भरणपोषण व अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए धन कमाना चाहिए। कितने जन निकम्मा व आलसी जीवन चाहते हैं, कितने जन वैराग्य का ढकोसला ओढ़कर तथा कथित साधू व सन्यासी का जीवन अपना लेते हैं, कितने जन अकर्मण्य रहकर दूसरों पर बोझ बनना चाहते हैं। ऐसे जन अपना ज़मीर बेचकर, भीख माँगकर या दूसरों से किसी न किसी बहाने कुछ उधार लेकर अपने जीवन को गुज़ारते रहते हैं।

ऐसे व्यक्ति आत्मसम्मानविहीन, महाआलसी व महास्वार्थी होने के कारण प्रकृति के विकास विषयक नियम के विरोधी बनकर आत्मपतन के राही बनते हैं। अत: जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु उचित साधन (**means**) से धन कमाना ज़रूरी है। समस्या तब खड़ी होती है, जब इन्सान जीने के लिए धन नहीं कमाता, किन्तु धन कमाने के लिए जीने लगता है। यहीं पर एक स्वस्थ सन्तुलन की आवश्यकता है।

संसार में आते व जाते समय

जन्म के समय नवागन्तुक शिशु के स्वागत के लिए कई सम्बन्धी उपस्थित रहते हैं। इन्सान की मृत्यु होने पर भी, जिस प्रकार बड़ा सा जनाज़ा निकालकर उसकी देह को क्रियाकर्म के लिए ले जाते हैं, वैसे ही उस वक़्त उसकी आत्मा को परलोक में ले जाने के लिए, उसके सम्बन्धियों, शुभचिन्तकों और सहायकारी शक्तियों का बड़ा समूह आता है। इसलिए, आत्मिक लिहाज़ से न तो इन्सान अकेला आता है और न ही अकेला जाता है।

- सत्यधर्म सन्देश

काम अपनी जगह सही है और बहुत ज़रूरी है, मगर उसके लिए अपने परिवार को ताक पर रख देना सही नहीं है।

धन के मालिक बनें या ग़ुलाम

धन हमारी शारीरिक, मानसिक, सामाजिक व आत्मिक प्रगति में बहुत सहायक प्रमाणित हो सकता है व होता है। लेकिन तभी जब धन हमारा ग़ुलाम हो और हम इसके मालिक हों। धन को अपना ग़ुलाम बनाकर ही हम इसे अपने व दूसरों के विकास में ख़र्च कर सकते हैं तथा इस प्रकार चारों जगतों (भौतिक, वनस्पति, पशु व मनुष्य) के विकास में भी सहायक बन सकते हैं। हम धन के मालिक बनकर जहाँ तक ऐसा कर पाते हैं, वहीं तक धन की सच्ची सफलता है।

असल में समस्या तो तब आती है, जब धन को कमाते-कमाते हम इसके ग़ुलाम बन जाते हैं और यह हमारा मालिक बन जाता है। कई अवस्थाओं में हमारे पास इसे कमाने के लिए तो समय होता है, इसे ख़र्च करने, विश्राम करने, भ्रमण करने तथा सेवा परोपकार के लिए समय ही नहीं होता। जब हम धन के प्रति इस प्रकार की ग़ुलामी का जीवन जीने लगते हैं, तो यह हमारी बहुत दुर्गति करता है।

कमाल की बात यह है कि हमें अपनी यह दुर्गति प्रायः दिखती भी नहीं है। सौभाग्यवश यदि कोई मार्गदर्शक मिल भी जाए, तो भी यह ग़ुलामी आसानी से समझ में नहीं आती। ऐसी अवस्था में धन को लेकर हमारे सम्बन्धों में खटास आने लगती है। बाप-बेटे व भाई-भाई को दुश्मन तक बना देने में इसी धन की ग़ुलामी की ही भूमिका (role) है। किसी धन के ग़ुलाम से परोपकार की अपेक्षा तो दूर, वह तो अपने ऊपर भी उचित ख़र्च नहीं कर पाता। वह अपने उपकारियों की अवहेलना करता है तथा अपने बच्चों की शिक्षा व भोजन पर भी ठीक से ख़र्च नहीं कर पाता। धन की ग़ुलामी इस लोक व परलोक दोनों को बिगाड़ देती है।

अतः धन हुआ न एक अच्छा ग़ुलाम व नौकर एवं बुरा प्रभु व मालिक। इसलिए वे जन अत्यन्त सौभाग्यवान हैं, जो धन के मालिक हैं ना कि ग़ुलाम। काश, हम सभी धन की ग़ुलामी को देख सकें, उसकी हानियों को समझ सकें तथा इसकी ग़ुलामी से मुक्ति पा सकें, ऐसी है शुभकामना!

प्रार्थना और विश्वास का गहरा सम्बन्ध है। जिस प्रार्थना में विश्वास नहीं वह प्रार्थना नहीं, वे मात्र शब्द हैं।

भाग्य पुरुषार्थ के पीछे चलता है, अर्थात् पुरुषार्थ के द्वारा भाग्य अनुकूल हो जाता है।

धन अनुराग से क्या हानियाँ हो सकती हैं ?

धन अनुरागी जन दूसरों को धोखा देकर तथा उन्हें परेशानी व कष्ट में डालकर निम्न प्रकार से ग़लत ढंग से धन अर्जित करके अपनी आत्मा की महा हानि करते हैं-

- ❖ दूसरों के धन, ज़ेवर व सामान की चोरी करते हैं।
- ❖ जाली काग़ज़ात/दस्तावेज़/नोट बनाते हैं।
- ❖ लालचवश जुआ व सट्टा खेलते हैं।
- ❖ मिलावट व नशेदार वस्तुओं का व्यापार करके औरों की सेहत से खिलवाड़ करते हैं।
- ❖ पशुजगत् के जीवों को असमय मारकर उनके अंगों व उनकी खालों का व्यापार करते हैं।
- ❖ लेन-देन में अमानत में ख़यानत व ठगी करते हैं।
- ❖ रिश्वतख़ोर व कमीशनख़ोर बनते हैं।
- ❖ मुक़दमों में झूठी गवाही देते हैं।
- ❖ किसी का ख़ून तक कर देते हैं या करवा देते हैं।
- ❖ व्यभिचार करते या इस प्रकार का धन्धा करते हैं।
- ❖ व्यापार में साझीदार (Partner) को धोखा देते हैं।
- ❖ व्यापार में झूठ बोलते हैं व कम तोलते हैं।
- ❖ किसी की अज्ञानता का अनुचित लाभ उठाकर ATM कार्ड का दुरुपयोग कर या Net Banking पासवर्ड चुराकर उसके पैसे निकाल लेते हैं। ग़रीब व अनपढ़ लोगों को उधार देकर अनुचित रूप से ब्याज कमाते हैं।
- ❖ नौकर व मज़दूर (Labour) से काम लेकर उनकी मज़दूरी व हक़ ठीक से अदा नहीं करते हैं, आदि-आदि।

इसके विपरीत जो जन निर्दोष ढंग से भी धन उपार्जन करते हैं, उनके हृदय में धन बढ़ने के साथ-साथ जिन निकृष्ट भावों के बढ़ते जाने की सम्भावना रहती है, वे इस प्रकार हैं-

(1) अहं, (2) मोह, (3) कृपणता और (4) स्वार्थ

इस धरती पर तीन रत्न हैं- अनाज, पानी और मीठे शब्द।

कैसी होती है धन के दास की कामना?

धन के दास अपने इस प्रभु के सम्बन्ध में मानो इस प्रकार की कामना करते रहते हैं-

"हे धन! मैंने होश सम्भालने के बाद से तुम्हारी प्राप्ति के लिए जो व्रत ग्रहण किया था, उसका मैंने पूरी वफ़ादारी से पालन किया है। तुम्हारी प्राप्ति के लिए मैंने प्रतिदिन अपने शारीरिक और मानसिक बल को ख़र्च किया है। मैंने अनेक बार तुम्हारे लिए भूख और प्यास के कष्ट को सहा है, रात के आवश्यक आराम का त्याग किया है, दूसरों से बड़े-बड़े कटु वाक्य सुनना और उनसे कई तरह से अपमानित होना पसन्द किया है, मैंने तुम्हारी उन्नति के निमित्त अनेक बार झूठ और प्रवंचना तथा पाप कर्मों के द्वारा अपने आत्मा की अधोगति की है। मेरी यह आकांक्षा है कि तुम्हारे प्रति मेरा मोह विषयक दासत्व अधिक बढ़े और मैं तुम्हें अधिक लाभ करूँ।

मैं यह निश्चय जानता हूँ कि किसी दिन मेरा यह शरीर न रहेगा। मैं यह भी जानता हूँ कि तुम्हारे लिए जो-जो पाप मैंने किए हैं, उनसे मेरी आत्मा की बहुत अधोगति हुई है। यहाँ तक कि अब मेरे हृदय में तुम्हें यथेष्ट रूप से दान करके अपनी आत्मा के कल्याण करने की आकांक्षा भी नहीं रही। इससे बढ़कर तुम्हारे सम्बन्ध में मेरे दासत्व का और क्या प्रमाण हो सकता है! बेशक वह दिन आए, जब मेरा यह शरीर काठ और पत्थर की न्याईं अचेतन पड़ा हुआ हो। बेशक वह दिन आए, जब मेरी आत्मा तुमसे जबरन जुदा हो और तुमसे जुदा होकर तुम्हारे मोह के बन्धन के कारण खूब तड़पे व दुःख पावे और मेरी अधोगति-प्राप्त आत्मा अधम व किसी नीच लोक के विनाशकारी प्रभावों में रहकर धीरे-धीरे नष्ट हो और नाना प्रकार के दुःख भोगे। परन्तु ऐसा हो कि मैं तुम्हारा सच्चा दास होकर तुम्हें किसी परोपकार के काम में पूर्णतः या भली-भाँति दान न करूँ।

हे धन! मैंने तुम्हें किसी शुभ या पुण्य काम के लिए उपार्जन नहीं किया और इसलिए मैं तुम्हारे द्वारा न तो अपना और न किसी और का भला करना चाहता हूँ।

हे धन! मैं शुभ को नहीं चाहता। इसलिए मैं तुम्हें अपनी ऐसी सन्तान के पास छोड़ जाना चाहता हूँ कि जो या तो मेरी तरह तुम्हें किसी शुभ काम के लिए यथासाध्य ख़र्च न करे या यदि ख़र्च करे, तो बेशक बुरे कामों में ख़र्च करे, क्योंकि मेरी इसी में सबसे बढ़कर तृप्ति है। इसके भिन्न और किसी में नहीं।

ऐसा हो कि मेरी इस तृप्ति के साधन में किसी उच्च आत्मा का सद् उपदेश या शुभ उत्पादक कोई उच्च प्रभाव रोक न बने और तुम्हारे साथ मेरा अशुभ उत्पादक जो

कोई भी व्यक्ति अपने कार्यों से महान् होता है, अपने जन्म से नहीं।

सम्बन्ध स्थापित हो चुका है, वह कभी शिथिल न हो और तुम्हें किसी महान् कार्य में यथेष्ट रूप से दान करके मैं अपने देश व जगत् का कोई हित साधन न करूँ।"

धन साधन हो या साध्य?

मानव हृदय इच्छाओं का संगम है। वह अच्छा खाना-पीना चाहता है, सुख-सुविधाओं से सम्पन्न निवास, अच्छा पहनना व अच्छा दिखना, समाज में मान-प्रतिष्ठा, स्थान-स्थान पर भ्रमण करना तथा संसार में उपलब्ध बेहतरीन चीज़ों को पाना चाहता है। इन इच्छाओं की पूर्ति हेतु धन एक माध्यम व साधन (ज़रिया) है। इसलिए धन की आवश्यकता है। इसके साथ-साथ हमें इस सत्य को भी स्मरण रखना होगा कि धन से हम भोजन तो खरीद सकते हैं, भूख नहीं; मकान (**house**) खरीद सकते हैं, घर (**home**) नहीं; आरामदायक बिस्तर खरीद सकते हैं, नींद नहीं; पुस्तकें तो खरीद सकते हैं, विद्या नहीं; दवाइयाँ तो खरीद सकते हैं, स्वास्थ्य नहीं।

किन्तु, अकसर यह ग़लती मनुष्य दोहराता है, वह धन को साधन (**means**) न मानकर साध्य (**goal**) मान लेता है। वह धन की आवश्यकता को जानकर इसे कमाने लगता है और पता नहीं कब धन की लालसा उसके हृदय में घर कर जाती है! शुरू में ज़रूरत के लिए कमाता है, फिर संचय की भावना जागती है तथा धीरे-धीरे वह धन का लोभी बन जाता है। धन कमाना ज़रूरत (**need**) नहीं, लालच (**greed**) बन जाता है। तथा वह धन का अनुरागी व दास बनता जाता है।

धन का दास बनकर व धन कमाना अपने जीवन का लक्ष्य बनाकर वह जीवन के मुख्य लक्ष्य को देखने के अयोग्य हो जाता है, यदि उसे पहले यह लक्ष्य दिखता भी हो, तो वह उसकी आँखों से ओझल हो जाता है। ऐसे अभागे जन जब तक कोई ऐसा रोग उन्हें न घेर ले, जिसके कारण वह धन उपार्जन के अयोग्य हो जायें, तब तक धन अर्जित करने में अपनी सारी शक्तियाँ ख़र्च करते रहते हैं तथा जीवन के मुख्य लक्ष्य को पाने से वंचित रहकर मनुष्य जन्म को वृथा गंवाते हैं। बड़े मुबारक हैं वो जन, जो समय रहते इस सत्य को देख पाते हैं कि धन-सम्पत्ति मनुष्य की एक व दूसरी शारीरिक, मानसिक व आत्मिक ज़रूरतों को पूर्ण करने के लिए उपाय (साधन) मात्र है, ना कि वह उसके जीवन का उद्देश्य (साध्य) है।

धर्म का पालन ही सुख का मूल है।

क्या है देवात्मा का मार्गदर्शन?

"मेरी देव ज्योति ने मुझ पर यह सत्य प्रकट कर दिया है और मेरे सत्य अनुराग ने उसके साथ मेरे हृदय का मेल कर दिया है कि मेरा अपना कुछ भी नहीं और जो कुछ है व जहाँ कहीं है, वह सब कुछ नेचर का है। मैं यह सत्य देख रहा हूँ कि मैं अपने अस्तित्व के विचार से एक दिन कहीं भी वर्तमान नहीं था और मेरे इस कुल अस्तित्व को नेचर ने ही प्रगट किया है, नेचर में ही व नेचर के ही प्रबन्ध से वह अब तक इस पृथ्वी पर स्थित रहा है व स्थिर है तथा आगे को भी उसी के प्रबन्ध से यहाँ या कहीं और स्थिर रहेगा। जब मेरा अस्तित्व अपना नहीं, तब मेरे अस्तित्व के साथ और जो वस्तु सम्बन्ध रखती हो, वह चाहे कोई जीवित अस्तित्व हो या चाहे अजीवित, वह भी मेरी नहीं, बल्कि नेचर की व केवल नेचर की है। और, जबकि यह सब कुछ नेचर का ही है और नेचर के विकासकारी नियम में सहाय होने से ही उसका सबसे श्रेष्ठ व अच्छे से अच्छा व्यवहार हो सकता है और मेरे लिए सर्वाङ्ग हित अनुरागी होने के कारण नेचर के इस विकासकारी नियम का पूरा सहायक होना व पूरा साथ देना एक अनिवार्य काम है; तब न केवल मेरे लिए, किन्तु प्रत्येक मनुष्य के लिए जो असत्य व अहित अनुराग का अनुगमन करके अपने अस्तित्व को तबाह करना न चाहता हो, यह आवश्यक हो जाता है कि वह भी मेरी न्याईं अपने आपको और अपनी कहलाने वाली प्रत्येक वस्तु को जिस पर उसका पूरा अधिकार हो, नेचर की इस विकासकारी गति में सेवाकारी बनने के लिए पूर्णतया और बिना किसी शर्त के अर्पण करे। जबकि जो कुछ है, वह नेचर का है, तब वह चाहे किसी मनुष्य का अपना अस्तित्व हो और चाहे उसकी जायदाद आदि जैसी कोई वस्तु हो, उसकी जब नेचर के विकास के कार्य में काम आने से ही सच्ची और वास्तविक सफलता हो सकती है और उसके बिना कदापि नहीं; तब जिस जन को इस सत्य का ज्ञान हो चुका हो, वह नेचर के इस सबसे श्रेष्ठ और उच्च लक्ष्य में अपने आपको और जिस-जिस वस्तु पर उसका पूरा अधिकार हो, उस वस्तु को यदि अर्पण करने से संकोच करे, तो वह मानो एक ऐसा पागल इन्सान है जो अपने अस्तित्व की स्वयं ही हत्या पसन्द करता है।"

- देवात्मा

जीवन का रुख़

जैसे बदबू फैलती जाती है, वैसे ही ख़ुशबू भी दूर-दूर तक फैलती है। अपने जीवन का रुख़ परहित और परसेवा की ओर रखो। फिर देखो कि कितने दूरगामी प्रभाव पड़ते हैं, तुम्हारे सब तरफ़ के सम्बन्धों पर!

इन्सानियत तो हमने ब्लड बैंक से सीखी है साहब,
जहाँ बोतलों पर मज़हब नहीं लिखा जाता।

कैसी होनी चाहिये कामना?

(धन के सम्बन्ध में)

हे धन! मैं तुम्हें उचित विधि, ईमानदारी व मेहनत से अर्जित कर सकूँ! मैं तुम्हें कमाने हेतु अपनी आत्मा व जीवन मूल्यों को बेच न दूँ। तुमसे हो सकने वाली आत्मिक हानि से सुरक्षित रह सकूँ!

हे धन! मैं तुम्हें अपनी उचित आवश्यकताओं (need) की पूर्ति हेतु कमाऊँ, संचित करूँ तथा वर्द्धन करूँ, ना कि लालच (greed) के लिए। तुम्हें पाकर मुझमें अहं, मोह, कृपणता एवं स्वार्थ रूपी निम्न भावों का वर्द्धन न हो! इनसे मेरे आत्मा की रक्षा हो सके!

हे धन! मैं तुम्हें मात्र अपने व अपने परिवार हेतु ही ख़र्च न करूँ, बल्कि अपने समस्त उपकारियों (जिनसे मैंने दिन-रात सेवाएं पाई हैं) के लिए भी ख़र्च कर सकूँ। इससे आगे बढ़कर विशुद्ध परोपकार व सेवा कार्यों हेतु तुम्हें ख़र्च कर आत्मबलवर्द्धन कर सकूँ!

हे धन! तुम्हें कमाना व ख़र्च करना मेरे आत्मिक भले में सहायक बन सके, ऐसी है शुभकामना!

भजन

पर हित भाव हृदय उपजाओ,
धर्म मार्ग की दिग तब जाओ।
अहं स्वार्थ का है उत्पादक,
स्वार्थ भाव जीवन का नाशक;
स्वार्थ तजो तब जीवन पाओ।
पर उपकार करो सम्पादन,
उच्च गति का तब हो साधन;
तुम सेवक सच्चे कहलाओ।

रचयिता- देवात्मा

सलाह देने वालों की बजाय, लोग उन्हें चाहते हैं, जो उन्हें समझते हों।

THE LEAVES

Nowadays, we can see the change in season. The color of the leaves has started changing, leaves have started falling in preparation of winter. It is such a systematic cycle of Nature. Only by the intensity of the sunlight being more or less, trees can feel the changing season. 80% of the trees in North America are deciduous, their leaves shed in autumn to face the extreme winter. The only thing, which remains standing is the stump. Whatever required for tree's survival is gathered by them in summer itself. On the arrival of spring, trees are again lively with the new blossoming of leaves and flowers.

If we compare a human's life with this, the analogy is practically the same. We too are full of energy in childhood; we want to live life to the fullest. Energy of kids is usually unlimited. When we are young we are full of zest and vitality. We plan and conceive the next generation. When we enter middle age we start being worn out. We can see the end of our journey of life coming nearer. We start passing through the bitter truths of frugality of this mortal human body. We start gathering resources for our old age. What will happen of my family after I die, this thought worries us. What will happen of me after my soul leaves my body, these thoughts start coming to our mind.

Leaves are aware of their life span and every leaf falls only when it has completed its work. The life of a leaf lasts only from one spring to fall (patjhad), but it performs an important role for the growth of the tree. It gathers life saving material for the tree to survive.

Life of man is also similar to leaves. We go, but we tend to contribute something or other for our family, for our community and humanity as well. We leave our print, our thoughts, our values, our principles, worth emulating several examples of our lives, our footsteps of following the chosen path. We also leave our property, money, materialistic things, which are a finite resource,

Do not count you have lost, cherish what you have and plan what to gain. because past never returns but future may return the lost.

which is divided and gets over very soon. If we want our contribution to persist, we should rather institutionalize our thoughts and leave them rather than leaving money behind.

The best thing would be to link our thought process to our resources, such as to start some school, sanctuary, orphanage, nature conservation trust etc. for service of others. There is no better way to be immortal than this. You might have lived your life very comfortably to the fullest but the world will remember you only on the scale of what you left for others. There is nothing new if you have left enough for your wife and children. After fulfilling the basic responsibilities towards our family, it is our duty to return the rest to the society.

Whatever we have got is from the society itself, then why do we hesitate to return it back or to put it to good causes. This was the main intention of Nature too. One leaf does not only grow to enjoy its life, it helps the tree to grow, and even after going away it gives itself completely to the tree. Nature expects the same from us.

We should not limit the example of the tree to our family. We are not only connected to our family but are also attached to our community, our religion, our country and for that matter the entire humanity. Why not do something, which really fulfills our life. Instead of crying over the mortal nature of our life and comparing it to the spring to fall period of leaves, why not experience happiness in feeling that even in such a short span you have returned such a lot to the society, and you left your thoughts for the promotion of humanity, you left your values in maximum people you met. Then the feeling would be that 'My life was successful, I have collected enough material for the onward journey, I have returned the maximum I could from my life, now I do not fear the autumn, I am happy, readily happy to go to next subtle life.'

Shubh Ho! Shubh Ho! Shubh Ho! Shubh Ho!

Do not think why Nature does not grant all our wishes immediately, but thank Nature that it does not punish us immediately for all our mistakes.

आपने कहा था

.....गतांक से आगे

(भगवान् देवात्मा की वाणी के अंश)

13 मार्च सन् 1915 ई0

पूजनीय भगवान् ने पहले इस पद को अपने मुखारविन्द से उच्चारण किया-

जीवन तत्त्व की ज्योति फैले, जीवन बल चहुं दिग वितरण हो।

उनके विषय में जानना चाहता हूँ और यह सब परिश्रम इसलिए करता हूँ कि धीरे-धीरे यह मालूम कर सकूँ कि जो आत्मा मेरे साथ जुड़कर बराबर उच्च परिवर्तन लाभ कर सकते हैं, यदि उन पर और परिश्रम कर सकूँ, तो मेरा वह परिश्रम और अधिक सुफल हो सकता है। सभा या साधन वह हितकर है, जो आत्माओं में उच्च परिवर्तन ला सके। साधन का लक्ष्य ही यह है कि आत्माओं में उच्च परिवर्तन आवे। यदि ऐसा नहीं होता, तो साधन या सभा का उद्देश्य पूरा नहीं होता। प्रत्येक साधन से कुछ न कुछ उच्च परिवर्तन उत्पन्न होना चाहिए। यदि तुम्हारे द्वारा किसी का कुछ शुभ साधन हो सके, तो तुम्हारा जीवन उस हद तक हितकर है।

भगवान् ने मनुष्य शरीर की मिसाल देकर समझाया कि उसके जीने के लिये त्याग और ग्रहण दोनों बातों की आवश्यकता है। शरीर के जीवित रखने के लिये ठीक आहार के ग्रहण करने की ज़रूरत है और जो मैल अन्दर इकट्ठी होती है, उसके त्याग करने की आवश्यकता है। त्याग न हो,अन्दर से ज़हर न निकले, तो मौत है, चाहे मनुष्य आहार खाता रहे। आत्मा के सम्बन्ध में भी त्याग और ग्रहण की आवश्यकता है। आत्मा में से नीच भाव जावें और उच्च भाव पैदा हों। तब आत्मा की ख़ैर है। .....जी का पेट ख़राब है। शौच नहीं आता। पेट फूला हुआ है। डॉक्टर साहब ने मैल ख़ारिज करने की दवाई दी है। यह दवाई.....जी को पिलाना चाहते हैं, परन्तु वह नाक चढ़ाते हैं। उनको समझाओ, तो वह कहते हैं कि तुम तो मेरे शत्रु हो। आत्मा के सम्बन्ध में भी एक-एक मनुष्य का ऐसा ही हाल है। देवात्मा उसके अन्दर का ज़हर निकालना चाहते हैं, परन्तु वह निकालना नहीं चाहता। कहता है, 'देवात्मा मेरा हितकर्ता नहीं, दुश्मन है।'

आत्मा के विचार से एक-एक जन यह देखकर भी कि उसने नीच गति की है उसका ज़हर अन्दर जमा है, परन्तु तो भी वह उसको निकालना नहीं चाहता। कहता है कि अपनी घटिया हालत बताने से वह छोटे हो जाते हैं। दूसरों की नज़रों में वह घटिया नहीं कहलाना चाहते। अपनी कमी किसी पर जाहिर न करना अच्छा है। अब हम चोरी तो करते नहीं। जो पहले की है, उसको क्यों वापिस करें? आगे को नहीं करेंगे। यह भी

मन को जीतने वाला ही, अन्य क्षेत्रों में विजेता बन सकता है।

मनुष्य का झूठा वायदा है कि वह आगे को ऐसा नहीं करेगा। उसके अन्दर, जो शक्ति मौजूद है, वह उससे अपना अमल करायेगी। यही कारण है कि मनुष्य के जीवन में नाना प्रकार की नीच गतियाँ जारी रहती हैं। वह विनाश के मार्ग पर पड़े हुए हैं। वह खुद विनष्ट होना चाहते हैं। वह बचना नहीं चाहते। मनुष्य की यह अवस्था बहुत भयानक है। ऐसे मनुष्यों को जो ख़ुद मरना चाहते हैं, कोई नहीं बचा सकता।

ऐसे आत्माओं की आवश्यकता है कि जो मोक्ष और विकास के सच्चे अर्थों में आकांक्षी हों, जो मोक्ष और विकास के साधनों में प्रवृत्त हो सकें, ऐसे आत्माओं को लेकर ही आगे सिलसिला चल सकता है। तभी हम कोई सच्चे माईनों में स्थाई काम कर सकते हैं। काश, हमें ऐसे आत्मा प्राप्त हों!

दूसरी बात यह कि जिन आत्माओं का सफ़ाया (विनाश) होता जाता है, उनकी रक्षा हो। यह भी तभी होगा, जब मोक्ष और विकास के आकांक्षी आत्मा प्राप्त हों। आकांक्षित परिवर्तन के पैदा होने की ज़रूरत है। गुरु-शिष्य का सच्चा सम्बन्ध भी तभी पैदा हो सकता है। जब तक ऐसा नहीं, तब तक एक तरफा रिश्ता रहता है, अर्थात् गुरु तो शिष्य के साथ रिश्ता महसूस करता है, परन्तु शिष्य गुरु के साथ रिश्ता महसूस नहीं करता। जैसे कोई स्त्री अपने पति को कहे कि मैं हूँ तो तुम्हारी पत्नी, परन्तु तुम्हारे लिये करूँगी कुछ नहीं। ऐसा ही हाल एक-एक शिष्य का अपने गुरु के साथ है। वह कहता है कि मैं हूँ तो आपका शिष्य, परन्तु मैं आपके कुछ काम नहीं आना चाहता। कैसी ख़राब अवस्था! हमें ऐसा प्रचारक नहीं चाहिये, जो वज़ीफ़ा ले ले और काम कोई न करे। जब तक कोई किसी काम का न बने, तब तक एक तरफ़ा रिश्ता कुछ अरसे के लिये चल सकता है। हम हित चाहकर यह कर सकते हैं कि ऐसे जन समाज का जो थोड़ा बहुत काम कर सकते हैं, वह करें। कुछ दिन तक ऐसा हो सकता है। समय के साथ योग्यता लाभ करके एक-एक आत्मा को कुछ काम का औज़ार बनना चाहिये। हमें पता मिलना चाहिये कि कौन हमें अपना सम्बन्धी समझता है। अधिकांश जनों का हमारे साथ कोई सम्बन्ध नहीं है। इसमें सामाजिक जन भी शामिल हैं। शिष्य के भीतर यह आकांक्षा पैदा हो कि वह गुरु को अपना समझे और उसके साथ जुड़े। तब दोनों की चाह मिल जाने से हित का रास्ता बराबर खुल सकता है। चलते-चलते किसी को कुछ बता देना या सिखला देना उस्ताद-शागिर्द बनना नहीं कहलाता। मैं और क्या चाह सकता हूँ?

– श्रीमान् निर्मल सिंह जी की डायरी से (क्रमश.)...

जो कम बोलता है व प्यार से बोलता है,
उसे ही सम्मान मिलता है।

देव जीवन की झलक

.....गतांक से आगे

किसी व्यक्ति में उच्च परिवर्तन लाने के श्रेष्ठ भाव को सम्मुख रखकर व किसी और कारण से अनुचित समझकर उसकी कोई भेंट ग्रहण न करना

उस समय मुझे आत्माओं के उद्धार के लिए सच्ची कशमकश करने, और उन्हें विनाश की गहरी ग़ार से निकालने की असली शिक्षा लाभ करने का अवसर मिला। मुझे यह प्रतीत हुआ कि यह कशमकश तब हो सकती है, जब वह महान् शक्ति जो आपके भीतर से ऐसी अमूल्य कशमकश कराती है, किसी अंश में मुझे भी सचमुच प्राप्त हो। ऐसा हो कि जिन-जिन साधनों से आपकी यह उद्धारिणी शक्ति मुझे मिल सकती है उन्हें पूरा करने का मैं यत्न कर सकूँ।''

श्री देवगुरु भगवान् के एक सेवक ने जो कुई सालों से बहुत परिश्रम के साथ समाज की सेवा करते थे, उनके 62वें जन्म महोत्सव के शुभ अवसर पर कुछ अच्छे फलों के साथ एक अशरफ़ी (सोवरन) उनकी सेवा में भेंट के लिए भेजी। भगवान् ने उनके फल तो ले लिए, परन्तु उनकी आर्थिक अवस्था का विचार करके उनकी अशरफ़ी ग्रहण न की।

इसी शुभ अवसर पर एक और सेवक ने श्री देवगुरु भगवान् की सेवा में भेंट के लिए एक अशरफ़ी भेजी। भगवान् ने अपने इस सेवक की कुद दिनों पहले की कई शोचनीय क्रियाओं के कारण उनकी यह भेंट ग्रहण न की, और कई महीने बाद जब उन्होंने एक बार भगवान् को भोजन खिलाने की आकांक्षा प्रकट की तब उनके इस निमन्त्रण को भी उन्होंने उन्हीं कारणों से स्वीकार न किया, और उन कारणों को पहले की न्याईं इस बार भी प्रकट कर दिया।

मई सन् 1913 ई. में श्री देवगुरु भगवान् की एक सेविका की एक रिश्तेदार स्त्री उससे मिलने के लिए सोलन में गई। उस स्त्री का एक ज़वान भतीजा भी उसके साथ था। अपनी रिश्तेदार सेविका के जीवन में आश्चर्यजनक हितकर तबदीली और उसकी अच्छी अवस्था को देखकर वह स्त्री बहुत ख़ुश हुई, और जिस देवात्मा की दुर्लभ शरण को पाकर उसमें ऐसा सुन्दर परिवर्तन आया था, उनके लिए उसके भीतर स्वभावतः श्रद्धा उत्पन्न हुई। यह एक अमीर और धनी घराने की स्त्री थी। उसने वहाँ से अपनी रवानगी से पहले इलायचियों का एक हार अर्चन के भाव से और उसके साथ एक अशरफ़ी भगवान् की सेवा में भेंट के लिए भेजी। उन्होंने उसका हार तो ग्रहण कर लिया, परन्तु उसकी अशरफ़ी यह कहकर वापस कर दी कि इसका ग्रहण करना वह

चरित्र अमूल्य निधि है।

मुनासिब नहीं समझते।

जनवरी सन् 1913 ई. में रानी के रायपुर से एक साहिब श्री देवगुरु भगवान् से मिलने के आए। भगवान् बहुत अधिक बीमार थे, इसलिए वह उनसे मिल न सके। इस पर उन्होंने मिसरी का एक थाल भेंट के तौर पर भगवान् की सेवा में भेजा। भगवान् ने यह कहकर, कि उन्हें बहुत शोक है, वह इस भेंट को कई कारणों से ग्रहण नहीं कर सकते, उनके पास यह थाल फिर वापस भेज दिया।

श्री देवगुरु भगवान् के सेवकों में से एक जन, जो अपने एक अपराध के कारण सेवकी से अलग कर दिए गए थे, परन्तु जिनके हृदय में भगवान् के प्रति श्रद्धा का भाव वर्तमान था, लाहौर में आए और पहली मार्च सन् 1914 ई. को उन्होंने कुछ घी और उसके साथ फूलों का एक सुन्दर गुलदस्ता भगवान् की सेवा में भेंट किए जाने के लिए उनके पास भेजा। भगवान् ने उनकी यह दोनों वस्तुएं यह कहकर वापस कर दीं, कि शोक! हम उनकी इन चीज़ों को ग्रहण नहीं कर सकते, क्योंकि हम चाहते है कि वह जिस अपराध के कारण समाज से अलग किए गए हैं, पहले उसके हानिकारक रूप के देखने के लिए हमारे उच्च सेवकों की संगत के द्वारा हमारी ज्योति लाभ करें, और उचित दण्ड और साधनों के द्वारा उससे उद्धार पाने की चेष्टा करें। हम उनकी ऐसी भेंट की अपेक्षा उनकी ऐसी चेष्टा से सहस्र गुणा अधिक प्रसन्न होंगे।

एक बार एक सेवक की अपनी ही प्रार्थना पर उन्हें समाज का कुछ काम दिया गया। यह काम बहुत ज़रूरी था, और उन पर विश्वास करके ही वह काम उनके सुपुर्द किया गया था। परन्तु यह सेवक बीच में ही उस काम को छोड़कर चले गए, और यद्यपि वह यह प्रतिज्ञा करके गए थे कि वह शीघ्र वापिस आकर फिर उस काम को अपने हाथ में ले लेंगे, तथापि उन्होंने अपनी यह प्रतिज्ञा पूरी न की, और उन्होंने इस सम्बन्ध में अपने आपको पूर्णतः विश्वासघाती और अपने उच्च लक्ष्य के लिए बेवफ़ा प्रमाणित किया। श्री देवगुरु भगवान् को (जो इससे पहले भी उनकी कितनी ही शोचनीय क्रियाओं से बहुत कष्ट पा चुके थे) उनकी इस नीच गति से विशेषकर बहुत आघात और दुःख पहुँचा।

इस घटना के कुछ दिन बाद एक शुभ अवसर पर उन्होंने भगवान् को कुछ भेंट देनी चाही, परन्तु उन्होंने उनकी यह भेंट स्वीकार न की। फिर कई महीने के बाद उन्होंने एक दिन भगवान् से अपने यहाँ भोजन करने की प्रार्थना की, वह भी उन्होंने मंजूर न की।

.....क्रमशः

कुछ न करने से थोड़ा करना ही अच्छा है।

आपकी सेहत बस सात क़दम

यूँ तो सेहतमंद रहने के कई सूत्र होते हैं, लेकिन सबसे कारगर सूत्र वही है, जो आपका जीवनभर साथ निभाए। कभी भी ऐसा संकल्प न लें, जिसे आप लम्बे समय तक निभा न सकें। मसलन, आप कल से 10 किलोमीटर पैदल चलने का संकल्प कर लें और इसे एक दिन भी पूरा न कर पाएं, तो कोई फ़ायदा नहीं होगा। इसके विपरीत यदि आप 1 किलोमीटर प्रतिदिन चलने का संकल्प कर लें तो 100 प्रतिशत सम्भावना है कि आप इसे निभा ले जाएंगे।

हो सकता है कि 1 किलोमीटर से शुरू करके आप 10 किलोमीटर तक भी पहुँच जाएं। इसलिए शरीर पर उतना ही बोझ लादिए, जो उठाने में आसान हो, बाद में वज़न बढ़ाया जा सकता है, लेकिन शुरू से ही ज़्यादा वजन उठाने का ख़्याल ही ग़लत है।

सर्दियाँ चल रही हैं। नए साल पर लिया गया संकल्प अभी से फीका पड़ रहा है। हर साल 31 दिसम्बर के क़रीब आते-आते स्वास्थ्य को लेकर लिए गए संकल्पों का सिलसिला शुरू होता है, जो नववर्ष में एकाध महीना बीतने के साथ धुंधलाने भी लगता है। क्यों न इस बार साल के हर माह ऐसा संकल्प लिया जाय, जो लचीला हो, जिसके लिए आपको अपने जीवन में कम बदलाव लाना पड़ें और जिसे अपनाना भी इतना आसान हो कि संकल्प आजीवन आपसे जुड़ा रहे।

पानी पिएं: पानी आपके शरीर का प्रमुख तत्त्व है। आपके वज़न का क़रीब 60 प्रतिशत अंश पानी ही होता है। शरीर की एक-एक प्रणाली को पानी की आवश्यकता होती है। (औसतन एक वयस्क को हर रोज़ न्यूनतम 1.5 लीटर पानी चाहिए)।

नमक की मात्रा कम करें: तेज नमक वाले व्यंजनों, जैसे अचार, पापड़, चटनी, नमकीन दही, केन्ड सूप और सब्ज़ियों से बचें, क्योंकि इनमें नमक की मात्रा सामान्य से अधिक होती है। (प्रतिदिन 5 ग्राम से कम नमक आदर्श होता है)। ताज़ी सब्ज़ियाँ और फल अधिक से अधिक खाएं।

वज़न कम रखें: अतिरिक्त वज़न की वजह से भी आपकी सेहत के मामले में जोखिम बढ़ता है और आपको हृदय रोगों तथा मधुमेह जैसे रोगों के होने की आशंका अधिक हो जाती है। यदि आपका वज़न सामान्य से अधिक है या आप मोटापे के शिकार हैं, तो अपने खान-पान में धीरे-धीरे, मगर सेहतमंद बदलाव लाने की शुरूआत कर दें। अपनी शारीरिक सक्रियता बढ़ाएं (हर रोज़ एक समय पर वज़न लें, ख़ासतौर से सवेरे उठने के बाद और दिन में पहली पेशाब करने के बाद)। यदि एक दिन में वजन

दीन-दु:खियों में सुख बाँटना हमारे हित में है।
सुख बाँटने से सुख ही मिलता है।

1-1 किग्रा या एक सप्ताह में 1-2 किग्रा से ज़्यादा बढ़े, तो तुरन्त इस बारे में डॉक्टर से सलाह करें।

ब्लड प्रेशर और कोलेस्ट्रॉल लेवल की जाँच करवाएं: उच्च रक्तचाप वाले लोगों में स्ट्रोक होने या दिल का दौरा पड़ने का ख़तरा हमेशा रहता है। हर रोज़ अपना ब्लड प्रेशर मापें और यदि ज़रा भी बदलाव देखें तो डॉक्टर से मशविरा करें। रक्तचाप कम रहने से दिल पर दबाव कम रहता है।

शारीरिक रूप से चुस्त बनें: व्यायाम करने से शरीर की ताक़त बढ़ती है और हृदय समेत अन्य अंगों की मांसपेशियाँ भी मज़बूत बनती हैं। धीरे-धीरे व्यायाम की आदत बनाएं, ताकि शरीर में ख़ुद-ब-ख़ुद क्षमता भी विकसित हो जाय। शारीरिक व्यायाम के लिए आप अलग-अलग एरोबिक्स गतिविधियों को अपना सकते हैं। जैसे तैराकी एवं साईकल चलाना आदि।

धूम्रपान छोड़ें: धूम्रपान की वजह से ब्लड प्रेशर बढ़ता है। व्यायाम करने की क्षमता घटती है और रक्त का थक्का जमने की जोखिम भी अधिक रहती है।

शोर से भी बढ़ती है मानसिक बीमारियाँ

शोर हमारे कानों के लिए घातक है ही, हमें कई मानसिक बीमारियाँ भी दे सकता है। एक ओर आधुनिक जीवन और बदली जीवनशैली के तनाव तथा दूसरी ओर शोर भरा वातावरण मनुष्य को मानसिक रोगों से ग्रस्त कर रहा है। विकसित देशों में श्रवण शक्ति 70-75 साल की उम्र में कम होती है किन्तु भारत में इतना शोर प्रदूषण है कि यहाँ लोगों की श्रवण शक्ति 55-60 साल की उम्र में ही कम हो जाती है।

डॉ. अग्रवाल ने सलाह दी है कि लोगों को समझना चाहिए कि शोर प्रदूषण उनके लिए ख़राब है, अत: जिस कार्यवाही में शोर हो, उसे ख़त्म करें। यदि जैनरेटर लगाना हो तो ऐसा जैनरेटर लगाएं, जिसमें शोर न होता हो। यदि आपके कार्य स्थल पर किसी मशीन का शोर है, तो ईयर प्लग लगाएं।

वैसे, भारत में शादी-विवाह के समय प्रयोग होने वाले डी.जे. लाऊडस्पीकरों का स्थानीय निवासी विरोध कर सकते हैं। साउण्ड 40 डी.बी. से अधिक नहीं होना चाहिए, इससे अधिक होने पर पुलिस को कार्यवाही करनी चाहिए। परन्तु पड़ोसियों की कोई शिकायत नहीं करना चाहता है और पुलिस बिना शिकायत के कोई कार्यवाही नहीं करती।

आलस्य करने से विद्या नष्ट हो जाती है।

सफलता के प्रकार

सफलता, यानि **achievement,** किसी भी प्रकार की कामयाबी-यह तो हुई इसकी परिभाषा। तो, आओ, अब यह देखें कि सफलता का असली मतलब क्या है, उसका इन्सानी ज़िन्दगी में क्या महत्त्व है और उसके पीछे अपना सारा ध्यान, समय आदि लगाना किसी काम का है या नहीं?

इन्सानी जीवन में ख़ुदग़र्ज़ी एक बहुत बड़ा रोल अदा करती है, दूसरी चीज़ों के साथ, जैसे कि प्रतियोगिता, तुलना आदि। कुछ चीज़ों में कुछ हद तक सफलता हासिल करने का जो जुनून लोगों में चढ़ा रहता है, वह उनकी उन्नति के लिए ज़रूरी है। ये जो वैज्ञानिक आविष्कार हुए हैं, जो कला-विज्ञान की उन्नति हुई है, वह ऐसे ही बैठे-बैठे नहीं हुई है। किसी एक इन्सान को, अगर एक कल्पना या विचार में कामयाबी मिली, तो किसी और को उसका प्रयोग देखकर कोई और ख़्याल आया होगा और उससे प्रतियोगिता, तुलना की वजह से उसे भी अपनी मंज़िल को हासिल करने की प्रेरणा मिली होगी। तो, जब तक कि तुम अपनी ज़िन्दगी की श्रेष्ठता बढ़ाने में, उसकी बेहतरी में सहायक हो, तब तक ठीक है। पर, जैसे ही यह सफलता पाना तुम्हारे लिए अपने अहं को बढ़ावा देने का एक साधन बन जाती है, तुमको ज़्यादा अहंकारी बनाती जाती है, तब तुम्हें यह समझ जाना चाहिए कि तुम कुछ ग़लत कर रहे हो।

अगर तुम अपनी सारी ज़िन्दगी ऐसी सफलता को पाने में लगाते हो, जिससे तुम्हारा ख़ुद का किसी सांसारिक प्रकार से कोई भला हो या जिससे तुम्हारे परिवार का भला हो, तो यह काफ़ी नहीं है। सफलता कई प्रकार की होती है, जैसे जो लोग किसी बिना लाभ-हानि वाली संस्था में सामाजिक कार्य करते हैं, तो उनकी सफलता की परिभाषा और लोगों से अलग होती है। उनका मिशन अलग होता है- वे सिर्फ़ ग़रीब लोगों की ज़्यादा से ज़्यादा मदद करना चाहते हैं और उनके लिए कामयाबी, किसी एक ऐसे ही इन्सान के चेहरे पर ख़ुशी देखना मात्र होगी।

और, फिर कुछ ऐसे लोग भी होते हैं, जो सिर्फ़ भौतिक पदार्थों को अर्जित करने और उसकी सँभाल को ही अपना मिशन बना लेते हैं और उसे पाने के लिए वे कुछ भी करने को तैयार होते हैं। वे उसे पाने के लिए कई घण्टों का काम कर सकते हैं या फिर किसी को रिश्वत देकर आगे बढ़ते हैं। जबकि वे इतना परिश्रम करते हैं, परन्तु फिर भी वे ज़िन्दगी की असली चीज़ों को भूल जाते हैं। और, जब तक उन्हें इस बात का अहसास होता है, वह भी अगर हो, तब तक ज़्यादातर बहुत देर हो चुकी होती है।

भाग्यशाली वह है, जिसने ईर्ष्या करना छोड़कर सराहना सीख लिया है।

सफलता पाना एक बहुत बड़ी बात है, पर तभी, जब उसे सही तरीक़े से, सही काम के लिए और अच्छे व बुरे के बीच सही मापदण्ड को दिमाग़ में रखकर, पाया गया हो। तो, सिर्फ़ इसलिए कि हर कोई पैसे के पीछे भाग रहा है, का मतलब यह नहीं है कि ज़िन्दगी में वही एक मंज़िल है। वह एक महत्त्वपूर्ण भाग ज़रूर हो सकता है। पर, वह ज़िन्दगी का अन्त नहीं है। तुम्हें अपनी सफलता को सही श्रेणी में बाँटना आना चाहिए और तुम्हें यह अहसास होना चाहिए कि किस प्रकार की सफलता को प्राथमिकता देनी चाहिए। और, इसी के हिसाब से अपनी मंज़िल तय करके उसे पाने की कोशिश करनी चाहिए।

– परलोक सन्देश

एक बेटी की सेवा महान्

लुधियाना में मेरी माँ की उम्र की मेरे ताया जी की बेटी रहती हैं, उनकी उम्र लगभग 80 वर्ष की है। आदरणीय बहन जी ने एक बेटी गोद ली और उसे पाल-पोष कर बड़ा किया, शादी की। ससुराल की सहमति से वह बेटी अपनी माँ के साथ रहती है, उसके दो बच्चे हैं। एक कक्षा 9 और बेटा कक्षा 7 का विद्यार्थी है, दो अच्छे स्कूलों में पढ़ते हैं। बहन जी की बेटी ट्यूशन पढ़ाती है। बहुत मेहनत करती है। माता-पिता ऊपर रहते हैं व बेटी नीचे रहती है। बहन जी के कितने ही ऑप्रेशन हो चुके हैं। शुगर की मरीज हैं। आजकल भी गिरने से उनके कूल्हे में चोट आई हुई है, बिस्तर पर हैं, कुछ देखभाल जीजा जी करते हैं। उनकी बेटी समय पर खाना, दवाई आदि सब काम करती हैं। अपने माता-पिता को इस अवस्था में छोड़कर वह कहीं नहीं जाती। इसके बावजूद अपनी सेवा को महत्त्व न देकर अपने माता-पिता की सेवा को ज़्यादा महत्त्व देती हैं, जो उन्होंने अपनी बेटी की, की है। मैं यह नज़ारा देखकर धन्य हो गई, मैंने उसकी सेवा को प्रणाम किया।

– सुदेश खुराना (लुधियाना)

आलसी मनुष्य सदा ऋणी और दूसरों के लिए भारस्वरूप रहता है।

कृतज्ञता सुमन

नाम-ओम प्रकाश सैनी
पता: तिगरी, मुज़्फ़्फ़रनगर (उत्तर प्रदेश)
मो0-9927-869571
माता का नाम- श्रीमती कलावती, पिता-श्रीमान् बलवन्त सिंह सैनी
जन्म तिथि- 01.01.1945 जन्म स्थान- तिगरी, डा. भोपा
ज़िला- मुज़्फ़्फ़रनगर-251001 (उत्तर प्रदेश)

मेरा जन्म एक किसान परिवार में हुआ था। मेरे पिता एक ईमानदार व्यक्ति थे। उनका कुछ प्रभाव मेरे ऊपर भी पड़ा। क़रीब पाँच साल पहले मैं अपनी चाची जी के साथ देवआश्रम, रुड़की आया था। वह प्राय: यहाँ पर आया करती थीं। देवआश्रम आकर मुझे सब जनों में एक आत्मयीयता का भाव दिखाई दिया। सब लोगों के प्यार को देखकर मन आत्मविभोर हो गया। यह सब भगवान् देवात्मा के प्रभाव से सम्भव था। शुभकामना से मन बड़ा शान्त रहता है। मैं पहली बार आकर ही वहाँ का मेम्बर बन गया था। शुभकामना तथा हीलिंग से मुझे बड़ा फ़ायदा हुआ है। भगवान् के चरणों में आकर एक अनोखे आत्मिक सुख का अनुभव होता है। ऐसा मन करता है कि इस दर को छोड़कर कहीं नहीं जाँऊ, परन्तु कुछ पारिवारिक बाधाएं हैं। भगवान् के दर पर आकर ही अपने माता-पिता, भाई-बहनों, पारिवारिक जनों, सम्बन्धियों और अन्य साथियों के उपकार याद आने लगे हैं, जिनकी वजह से मैंने बहुत कुछ पाया है। अब मैं रोज़ अपने माता-पिता व अन्य उपकारियों को याद करके मंगलकामना करता हूँ कि उन सबका शुभ हो तथा अपनी ग़लतियों के लिए प्रायश्चित करता हूँ। यह सब देवप्रभावों का ही असर है। मेरे अन्दर अभी कुछ कमियाँ है, उन्हें दूर करने की कोशिश कर रहा हूँ। पहले तो मुझे ग़ुस्सा भी बहुत आता है तथा परिवार में भी गालियाँ तक दे देता था। अब उस पर ब्रेक लगा है।

भगवान् के दर पर आकर मुझमें परोपकार की भावना दृढ़ हुई है। मैं लोगों को पापों से बचाने के लिए प्रेरित करता हूँ तथा तन व मन से लोगों के उपकार में हमेशा लगे रहने की कोशिश करता हूँ। मैं अपने गाँव व लखनऊ में रहकर मिशन की पुस्तकें बेचता हूँ। दान एकत्र करता हूँ तथा इस समय लखनऊ में मिशन की मासिक पत्रिका के 12 सदस्य भी बनाए गए हैं। मेरा बुढ़ापा सफल हो रहा है। अब तो बस एक ही भाव मन में बना रहता है-भगवान् मेरा जीवन संसार के लिए हो, गर ज़िन्दगी भी हो तो उपकार के लिए हो।

- ओम प्रकाश

हमने ज़िन्दगी को कुछ इस तरह आसान कर लिया,
किसी को माफ़ कर दिया, किसी से माफ़ी माँग ली।

कहाँ खो गई बच्चों सी निश्छल हँसी?

हँसी का कोई इतिहास नहीं मिलता। जब से मनुष्य का जन्म हुआ, तब से उसे हँसी के झटके लग रहे हैं। मनुष्य के अतिरिक्त कोई भी प्राणी हँस नहीं सकता। रोने वाले प्राणी मिल जाएंगे, पर हँसने वाला इकलौता प्राणी इन्सान है। वह रोता भी बहुत है। उसका रो-रोकर दम न निकल जाए, इसलिए प्रकृति ने उसे हँसने की कला प्रदान की है। मनुष्य के पास दिमाग़ है। इस दिमाग़ का उपयोग वह हँसने व रोने में करता है। रोना जब मनुष्य की नियति बन जाती है, तो अचानक कहीं से छकड़ों में भरकर हँसी आ जाती है। कहते हैं कि जब दु:ख के बादल घनेरे होने लगें, तो सोचना चाहिए कि सुख कहीं आसपास ही है। सुख आता है और दु:ख उड़नछू हो जाता है।

हँसी संक्रामक होती है। किसी स्कूल में यह हँसी कभी संक्रामक हुई थी। स्कूल के सारे बच्चे हँस रहे थे। हँसी का कारण किसी को भी पता नहीं था। दमकल विभाग को बुलवाना पड़ा। बच्चों को एक-एक करके स्कूल से निकालना पड़ा। दमकल कर्मी बच्चों को बग़ैर देखे निकाल रहे थे। उन्हें डर था कि कहीं वे भी इस हँसी के चंगुल में न फँस जाएं। बच्चों के तितर-बितर होते ही हँसी का दौर भी थम गया। ऐसा ही एक वाक़या तब हुआ, जब एक बुज़ुर्ग महिला लॉरेल हार्डी की फिल्म देख रही थी। उस बुज़ुर्ग महिला पर हँसी का दौरा पड़ा। हँसते-हँसते उसका बुरा हाल हो गया। नाक मुँह से ख़ून निकलने लगा। अन्त में, उस बुज़ुर्ग महिला की मौत हो गई। पोस्टमॉर्टम में आँतें फटी हुईं मिलीं। किडनी, लीवर सभी डैमेज थे। उनकी क़ब्र पर लॉरेल हार्डी हैट उतारे खड़े थे। इन विश्व प्रसिद्ध मसख़रों की भी आँखें नम थीं।

कहते हैं कि हँसने पर पूरी क़ायनात साथ देती है। रोने पर कोई साथ नहीं देता।रोना अकेले पड़ता है। कारण यह है कि हँसना एक सकारात्मक प्रक्रिया है। हमारा दिमाग़ सकारात्मकता को जल्दी ग्रहण करता है। इसीलिए हमें हँसते हुए व्यक्ति ज़्यादा अच्छे लगते हैं। हँसता हुआ चेहरा देख हमारा मस्तिष्क सहज प्रतिक्रिया देता है। इसलिए जब दो अजनबी मिलते हैं, तो हँसकर मिलते हैं, ताकि उनके बीच सहजता बरक़रार रह सके। हँसते हुए आदमी का इम्यून सिस्टम सही रहता है।

हँसने के कई तरीक़े होते हैं। कोई खिलखिला कर हँसता है। कोई हल्का सा मुस्कुरा देता है। सामुद्रिक शास्त्र के अनुसार, जो खिलखिलाकर हँसते हैं, उनकी हँसी निष्कपट होती है। उसमें दिखावा नहीं होता। कुछ हँसी के कारण को देर से समझ पाते

सब धोखेबाज़ियों में पहली और सबसे ख़राब धोखेबाज़ी
अपने आपको धोखा देना है।

हैं। उनकी हँसी समझ पाने की क्षमता कमज़ोर होती है। इसी बात पर एक चुटकुला पेश है-

जंगल में बन्दर ने एक चुटकुला सुनाया। सारे जानवर हँस पड़े। गैंडा नहीं हँसा। एक महीने बाद गैंडा अचानक हँसने लगा। सभी जानवर हैरान परेशान हो गये, उसकी इस अकारण हँसी पर। बन्दर ने रहस्य पर से पर्दा उठाया। उसका कहना था कि उस दिन का चुटकुला गैंडे को आज समझ में आया है।

जो लोग मन्द-मन्द मुस्कुराते हैं, उस हँसी में शालीनता होती है। ऐसे लोग गम्भीर प्रवृत्ति के होते हैं। कुछकी हँसी हिनहिनाहट जैसी होती है। ऐसी हँसी वाले लोग कपटी होते हैं। अटट्हास करने वाले लोग दम्भी होते हैं। ऐसी हँसी केवल रामलीला व महाभारत मंचन में ही सुनाई देती है। ऐसी हँसी रावण या कंस के किरदार हँसते हैं। साधारण मौक़ों पर ऐसी हँसी दुर्लभ है। इस तरह की हँसी में कृत्रिमता होती है।

जो लोग विनोद प्रिय होते हैं, वे अक्सर लोकप्रिय होते हैं। हास्य से भरपूर लोग ऊर्जा से लबरेज़ होते हैं। उनकी संगत में रहना सभी पसन्द करते हैं। कठोर व रुक्ष स्वभाव वाले लोगों से सभी दूर भागते हैं। कई बार ख़ुशी देश, काल व परिस्थिति पर निर्भर करती है। वैसे एक हीं तरह की परिस्थिति में कई बार कोई ख़ुश दिखता है, तो कोई दु:खी। फ़र्ज़ कीजिए कि पति-पत्नी शॉपिंग कर रहे हैं। ऐसे में पत्नी ख़ुश होती है, तो बेचारा पति दु:खी। एक को मनपसन्द चीज़ें मिलती है, तो एक को बिल का भुगतान करना पड़ता है।

एक बार अवसाद ग्रसित हो एक सज्जन मनोचिकित्सक के पास पहुँचे। उस चिकित्सक ने अवसाद कम करने की गोलियाँ लिख दीं। साथ ही उन्हें ख़ुश रहने की नसीहत भी दे डाली। उसने कहा कि दवाइयाँ तभी काम करेंगी, जब आप ख़ुश रहेंगे। आप हरिशंकर परसाई की कुछ किताबें ख़रीद लीजिए। उन्हें पढ़ा करें। आपको हँसी ज़रूर आएगी। सज्जन ने कहा कि वे ही हरिशंकर परसाई हैं। कई बार दूसरों को हँसाने वाला आदमी ख़ुद हँसी से महरूम रह जाता है। ये तो वही बात हुई कि जल में रहकर भी मीन प्यासी रह जाय।

हँसी का वर्गीकरण करने वालों ने कई तरह की हँसी का ब्यौरा दिया है। जैसे ब्रांडेड हँसी, कुटिल हँसी, सूखी हँसी, साज़िशन हँसी, पॉलिटिकल हँसी, बेबस हँसी इत्यादि। एक और तरह की भी हँसी है-बच्चों सी निश्छल हँसी। ऐसी हँसी बड़ों में भी

हमारी सबसे बड़ी शान कभी न गिरने में नहीं, बल्कि जब-जब हम गिरें, हर बार उठने में है।

पाई जाती थी, जो अब धीरे-धीरे विलुप्त हो रही है। अब इस तरह की हँसी का अकाल पड़ गया है। कभी ऐसी हँसी गोपियों के चेहरों पर पाई जाती थी, जो बरबस कृष्ण की बांसुरी की धुन सुनकर आ जाती थी। रसखान लिखते हैं-

माई री! वा मुख की मुस्कान सम्हारि न जैहें, न जैहैं, न जैहैं।

आज हाई टेक के ज़माने में मनुष्य जब मंगल पर बस्तियाँ बसाने को उतारू है, ऐसे में बच्चों सी निश्छल हँसी का गुम होना चिन्ता का सबब है। इस बात को हम जैसे फेसबुकिया लोग नहीं समझ पाएंगे। समझने वाले निदा फ़ाज़ली थे, जो मानते थे कि बच्चों की हँसी में रब बसता है। वे बच्चों की हँसी की तुलना इबादतगाह से करते हैं-

घर से मस्जिद है बहुत दूर, चलो यूँ कर लें; किसी रोते हुए बच्चे को हँसाया जाए।

प्रेषक- चन्द्रगुप्त (अम्बाला शहर)

भजन

(धन के प्रति सकारात्मक सोच)

धन अनुराग से रक्षा पाऊँ।
धन अनुराग से मुक्ति पाऊँ।1।

धन का प्यार है झूठा बनाता,
हिरदय पर है मैल चढ़ाता;
कपटी बनाता प्रेम घटाता,
समय के रहते जाग मैं पाऊँ।2।

धन जब आता अहं बढ़ाता,
कृपण बनाता स्वार्थ जगाता;
धन मुझमें है मोह बढ़ाता,
होश में रहकर इसे कमाऊँ।3।

धर्म को रख संग धन कमाऊँ,
धोखा न दूँ मैं धोखा न खाऊँ;
परसेवा में धन को लगाऊँ,
अर्थपूर्ण जीवन मैं बनाऊँ।4।

ब पाँच सैकेण्ड की मुस्कुराहट से फोटो अच्छी हो सकती है, तो हमेशा मुस्कुराने से ज़िन्दगी भी अच्छी हो सकती है।

ऐसे मिली ब्रेल लिपि

(एक हादसे ने लुई ब्रेल की आँखों की रोशनी छीन ली। ख़ुद देख नहीं पाते थे, लेकिन वे दृष्टिहीनों के लिए पढ़ने का ज़रिया बने)

जब तुम आँख बन्द करते हो, तो सिवाय अन्धकार के कुछ भी नहीं दिखता। ज़रा सोचे, जो दृष्टिहीन होते हैं, वे अपना जीवन किस तरह व्यतीत करते होंगे? वे पढ़ना चाहते होंगे, पर पढ़ नहीं पाते होंगे। लेकिन, एक इन्सान ने ऐसे लोगों को पढ़ने का एक ज़रिया दिया। वह ज़रिया है 'ब्रेन लिपि'। हम बात कर रहे हैं लुई ब्रेल की। दृष्टिहीनों के लिए 'ब्रेल लिपि' का आविष्कार करने वाले लुई का जन्म 4 जनवरी 1809 में फ्रांस के एक छोटे से गाँव कुप्रे में हुआ था। इस महत्त्वपूर्ण आविष्कार के बाद वे दृष्टिहीनों के लिए 'ज्ञान के चक्षु' बन गए। ख़ुद लुई नेत्रहीन थे, इसलिए वे हमेशा सोचा करते थे कि ऐसा क्या किया जाए, जिससे दृष्टिहीन लोग भी पढ़ सकें। लुइस मध्यम वर्गीय परिवार से ताल्लुक रखते थे। उनके पिता साइमन रेले ब्रेल शाही घोड़ों के लिए काठी और ज़ीन बनाने का काम करते थे। परिवार की मूलभूत ज़रूरतें पूरी नहीं हो पाती थीं, जिस वजह से साइमन रेले को अतिरिक्त मेहनत करनी पड़ती थी। कम उम्र में ही लुई को भी उन्होंने अपने साथ काम में लगा लिया था। काम करते समय एक दिन एक चाकू अचानक लुई की आँख में जा लगी। बाद में उन्होंने दूसरी आँख से भी कम दिखाई देने की शिकायत की। तब किसी ने ध्यान नहीं दिया। इस लापरवाही के चलते वे आठ वर्ष की उम्र में ही दृष्टिहीन हो गए। उनका बचपन अन्धकार में डूब गया। बावजूद इसके लुई ने हार नहीं मानी। उनके मन में संसार से लड़ने की प्रबल इच्छाशक्ति थी। वे फ्रांस के मशहूर पादरी की शरण में गए। पादरी के प्रयासों से 1819 में दस वर्ष के लुई का दाखिला रॉयल इंस्टीट्यूट फॉर ब्लाइंड्स में हो गया। स्कूल में उन्हें पता चला कि एक सेवानिवृत्त कैप्टन ने ऐसी कूटलिपि का विकास किया है, जिसकी सहायता से सैनिक टटोलकर अन्धेरे में भी संदेशों को पढ़ सकते थे। लुई का दिमाग़ इस कूटलिपि में दृष्टिहीनों के लिए पढ़ने की सम्भावना ढूंढने लगा। कैप्टन से मिलने पर उन्होंने कूटलिपि में कुछ संशोधन का प्रस्ताव रखा, जिसे कैप्टेन ने स्वीकार कर लिया।

शारीरिक रूप से अक्षम होने का मतलब यह नहीं कि आप सफल नहीं हो सकते। कई लोग ऐसे मिल जाएंगे, जो शारीरिक रूप से अक्षम होने के बावजूद भी सफल हैं। दुनिया उन्हें जानती है। उनके जज़्बों को सलाम करती है। डर को पीछे छोड़कर बस डटे रहने की ज़रूरत है।

मूर्खों से तारीफ़ सुनने से बुद्धिमान से डाँट सुनना ज़्यादा बेहतर हैं।

तुलसी इस संसार में भाँति-भाँति के लोग

पिछले दिनों मैं केदारनाथ गई थी। वहाँ से लौटते समय रास्ते में मैंने एक पिट्ठू वाले को एक महिला से उलझते देखा। दरअसल, उक्त महिला के पति पहले ही पिट्ठू वाले को किराया देकर पालकी से गौरीकुंड के लिए रवाना हो गए थे। वह महिला भी पैदल ही चलकर मन्दिर में दर्शन करना चाहती थी, इसलिए वह पिट्ठू पर आना नहीं चाहती थी। पिट्ठू वाला चूँकि पहले ही किराया प्राप्त कर चुका था, इसलिए वह उनसे बार-बार पिट्ठू पर आने के लिए अनुरोध कर रहा था। मगर वह नहीं मानीं।

अंत में सात किमी दूर रामबाण तक आते-आते उस पिट्ठू वाले की भी हिम्मत जवाब दे गई, लेकिन महिला अपनी पदयात्रा पर ही अडिग रही। आखिरकार उस पिट्ठू वाले ने जेब से किराये के पाँच-पाँच सौ के तीन नोट निकाल उस महिला के सुपुर्द कर दिए। उस महिला ने पिट्ठू वाले को कहा, 'तुम भी मेरे साथ चले हो, चाहो तो अपनी मजदूरी काट सकते हो।' लेकिन उसने तत्काल जबाव दिया, 'हमारे यहाँ ऐसा नहीं होता मैडम! जब हमने कोई भार उठाया ही नहीं, तो मजदूरी किस बात की?' उसकी बातें बरबस ही मेरे दिल को छू गईं। यदि वो चाहता तो किराये को लेकर भाग सकता था, लेकिन केदारनाथ से सात किमी दूर पहुँचकर उसने किराये की धनराशि वापस कर आश्चर्यचकित कर दिया। उसने ईमानदारी की ऐसी मिसाल पेश की, जो सदैव स्मृति में बनी रहेगी।

फिर केदारनाथप के बाद हम हरिद्वार के लिए रवाना हो गए। हरिद्वार पहुँच गंगा तट जाने के लिए रिक्शा किया। जाते समय कोतवाली के समीप हमारा रिक्शा एक राहगीर से भिड़ गया। दरअसल, उस राहगीर को सड़क पर पड़ा एक सौ रुपये का नोट मिल गया था, जिस पर रिक्शावाले की भी निगाह थी। होना तो यह चाहिए था कि वे अगल-बगल के राहगीरों से पूछते, लेकिन वे उस नोट पर स्वत्व के लिए आपस में लड़ गए।

काफी देर बहस करने के बाद उन लोगों ने आपस में ही पचास-पचास रुपये बाँट लिए। दोनों की बेईमानी को देख मुझे वह प्रसिद्ध वचन याद आ गया- 'तुलसी इस संसार में भाँति-भाँति के लोग।'

बहुत प्रश्न करना मूर्खता की निशानी है। मूर्ख घण्टे भर में जितने प्रश्न कर बैठता है, बुद्धिमान उनका पूरा उत्तर सात वर्षों में भी नहीं दे सकता।

बुद्धिमान व्यक्ति का कोई भी शत्रु नहीं होता।

शिष्टाचार सबसे बड़ी योग्यता

अमेरिका के एक बड़े उद्योगपति धनवान व्यक्ति की पत्नी एक दिन सायंकाल पैदल घूमने निकली। संयोग से राह में मूसलाधार वर्षा होने लगी। बरसात से बचने के लिए वह पास की दुकान के एक बरामदे में जाकर खड़ी हो गई। उस दुकान में कार्य करने वाले कर्मचारियों की छुट्टी हो गई थी और दिन भर के थके मान्दे कर्मचारी घर पहुँचना चाहते थे, किसी के पास इतनी फुर्सत न थी कि वह बरामदे के कोने में खड़ी उस अजनबी महिला की ओर ध्यान दे।

अन्त में एक सामान्य क्लर्क जब दुकान से बाहर आया, तो उसकी निगाह उस महिला पर पड़ी। वह उसको जानता नहीं था। शिष्टाचार के नाते उसने तुरन्त भीतर से एक कुर्सी लाकर उस महिला को बैठाते हुए पूछा - महोदया! मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ? महिला ने कहा- आपका धन्यवाद, मैं बरसात के पानी से बचने के लिए यहाँ आई हूँ, वर्षा कम होते ही यहाँ से चली जाऊँगी। क्लर्क ने महिला के लिए चाय मंगाई और जब तक वर्षा होती रही, तब तक वह वहाँ खड़ा, उनसे बातें करता रहा।

दूसरे दिन जब वह क्लर्क दुकान पर कार्य करने के लिए आया, तो उसे दुकान के मालिक के द्वारा एक लिफाफा मिला, जिसमें उस महिला ने उस कर्मचारी को अपने निवास स्थान पर आमन्त्रित किया था।

शाम के समय जब वह उस महिला की कोठी पर पहुँचा, तो पहले दिन वाली महिला ने उसका स्वागत किया और कहा- मैंने स्काटलैंड में एक बहुत बड़ा फार्म हाऊस खरीदा है, उसके प्रबन्धन के लिये मुझे एक योग्य मैनेजर की ज़रूरत है और तुमसे योग्य व्यक्ति मुझे नजर नहीं आता। क्लर्क के मना करने पर कि वह योग्य नहीं है। महिला ने उसे कहा- शिष्टाचार तुम्हारी सबसे बड़ी योग्यता है। और उसे अच्छे वेतन पर मैनेजर नियुक्त कर लिया। वह महिला थीं - श्रीमती कारनेगी। ■

संकलन : अरुण कुमार (रुड़की)

- ❖ बलवान, क्रियाशील, कर्तव्यपरायण, ईमानदार और मेहनती लोगों को ही जीवन का सर्वोच्च आनन्द प्राप्त होता है।
- ❖ यदि अपना मन बदल जाए, तो व्यवहार स्वतः ही बदल जाएगा और उसका दूसरों पर एक न एक दिन असर पड़ेगा ही।

व्यक्ति अपने गुणों से ऊपर उठता है, ऊँचे स्थान पर बैठने से नहीं।

भोपाल केन्द्र समाचार

अप्रैल माह में यहाँ पर रविवार का साधन नियमित रूप से टहिलरामानी बन्धुओं के घर पर चलता रहा है, जिसके अच्छे फल भी दृष्टिगोचर हो रहे हैं। पिछले चार हफ्तों से रविवार की सभा में बाहर से लोगों को आमन्त्रित करने में श्री जवाहर लाल जी और श्री सुनील जी ने विशेष रूचि ली। जिसके परिणामस्वरूप आने वालों की संख्या 45 से भी ऊपर पहुँच गयी। घर पर इतने लोगों के बैठने में कठिनाई को देखते हुए चौथे हफ्ते की सभा घर के सामने वाले मन्दिर के प्रांगन में रखी गयी। प्राय: 65 जन लाभान्वित हुए। सभाओं की सेवा श्रीमान् अशोक जी के द्वारा हुई। दो सभाएं रिश्तों के महत्त्व और दो सभाएं 'परलोक अटल सत्य है' विषयों पर रहीं। हाजरिन के द्वारा पूछे गये प्रश्नों के उत्तर भी दिये गए। कई नये लोगों से मुलाकात हुई और हितकर बातचीत का दौर तो चलता ही रहता है। हीलिंग और परलोकवासी सम्बन्धियों से लिखित में बात कराने का सिलसिला भी चलता रहा है। जीवन में परम् पूजनीय भगवान् देवात्मा जी के एहसान बहुत स्पष्ट रूप से दिखते रहते हैं और जीवन सकारात्मकता व ख़ुशियों से भरा महसूस होता है।

न्यू जर्सी केन्द्र समाचार

07 मई को अशोक जी और नैना जी अमेरिका पहुँच गये हैं। यहाँ पर भी हितकर कार्यक्रमों का सिलसिला चालू है। यहाँ बच्चों के परिवारों ने हर माह मिलकर साधन सभा कराने का सिलसिला चला रखा है। रविवार के दिन वहाँ एक सभा रखी गई। करीब 07 परिवारों के 24 जन उपस्थित रहे। कुछ समय छोटे बच्चों से अंग्रेजी में बात कर माता-पिता के उपकार समझाने का साधन किया गया। उसके बाद शेष बड़ों के लिए 'परलोक में क्या-क्या होता है?' विषय पर उद्बोधन श्रीमान् अशोक जी के द्वारा दिया गया। बाद में सबके द्वारा **Potluck** से लाए गए सामान में से मिलकर भोजन किया गया। बहुत सुन्दर वातावरण रहा। सहायकारियों की उपस्थिति साफ़ महसूस होती रही। माह जून में डॉ. नवनीत अरोड़ा जी और डॉ. सीमा जी के अमेरिका आने के प्रोग्राम की तैयारी के बारे में भी चर्चा की गई। शुभ हो!

- अशोक रोचलानी

सभी प्रकार के भय में से बदनामी का भय सबसे बड़ा होता है।

प्रेरणास्पद उद्बोधन सेवा

रुड़की: 22 मई 2018 को द्वारका अपार्टमेन्ट्स के परिसर में डॉ. नवनीत जी ने बच्चों की नीति शिक्षा करवायी। प्राय: 25 बच्चे लाभान्वित हुए। तत्पश्चात् माता-पिता को **Meaningful Parenting** के सूत्र बताए। प्राय: 70 जन लाभान्वित हुए। शिवम कुमार साथ रहे। ` 300 की पुस्तकें भी बिकीं। सुश्री अनीता जी व श्रीमती सीमा मिश्रा जी इस कॉलोनी में जाकर शिविर हेतु निमन्त्रण भी देकर आईं।

संगरुर: 27 मई 2018 को हमारे साथी सेवक श्री हरीशचन्द्र जी अरोड़ा व श्रीमती कुन्ती देवी जी ने अपने विवाह की 50वीं जयन्ती मनाई। इस अवसर पर पारिवारिक व कुछ विशेष मित्र परिवार शामिल हुए। उनके भतीजे डॉ. नवनीत अरोड़ा जी रुड़की से सपरिवार पहुँचे व माननीया चाचीजी की पिछले 50 वर्षों की परिवार के प्रति सेवाओं के लिए की गई सेवाओं का भरे दिल से वर्णन किया एवं दोनों के सेवाकारी जीवन के प्रति सम्मान व्यक्त किया, इससे एक ऐसा स्वर्गीय दृश्य बना कि उपस्थित जनों के हृदय को छू गये। इन जोड़ी का हर प्रकार से शुभ हो!

ग्रीष्मकालीन शिविर, रुड़की

हर्ष का विषय है कि सख़्त गर्मी के बावज़ूद 26 मई से 03 जून 2018 के दौरान रखा गया आत्मबल विकास शिविर हर प्रकार से सफलतापूर्वक सम्पन्न हो गया है। परम पूजनीय भगवन् व सहायकारी शक्तियों को उनकी असीम कृपा हेतु जितना धन्यवाद दें कम है। शिविर की विस्तृत रिपोर्ट अगले अंक में दी जायेगी।

भावी शिविर सूचना

हर्ष का विषय है कि आगामी आत्मबल विकास शिविर दिनांक 26 से 30 सितम्बर 2018 तक आयोजित होगा। इसमें शामिल होने का अभी से मन बनायें।

For mission details, Visit us : www.shubhho.com

सम्पर्क सूत्र :

सत्य धर्म बोध मिशन

रुड़की (99271-46962), दिल्ली (98992-15080), भोपाल (97700-12311), सहारनपुर (98976-22120), गुवाहटी (94351-06136), ग़ाज़ियाबाद (93138-08722), कपूरथला (98145-02583), चण्डीगढ़ (0172-2646464), पद्मपुर (09309-303537), अम्बाला (94679-48965), मुम्बई (9870705771), पानीपत (94162-22258), लुधियाना (70094-36618)

स्वामी डॉ. नवनीत अरोड़ा के लिए प्रकाशक व मुद्रक श्री ब्रिजेश गुप्ता ने कुश ऑफसैट प्रैस, ग्रेटर कैलाश कॉलोनी, जनता रोड, सहारनपुर में मुद्रित करवा कर 711/40, मथुरा विहार, मकतूलपुरी, रुड़की से प्रकाशित किया
सम्पादक - डॉ0 नवनीत अरोड़ा, D-05, हिल व्यू अपार्टमेण्ट्स, आई.आई.टी. परिसर, रुड़की
ज़िला हरिद्वार - 247667 (उत्तराखण्ड) 01332-285667, 94123-07242